ISSN : 2583-2948

ए के अर्चना
हिंदी असिस्टेंट प्रोफेसर, डिपार्टमेंट ऑफ हिंदी
सैंट मैरिज सेंटेनरी डिग्री कॉलेज,
सिकंदराबाद, हैदराबाद,
मेल आईडी: archanashah434@gmail.com

समाज की अभिवृद्धि में भारतीय साहित्य का अवदान

साहित्य और समाज वैसे तो विपरीत से प्रतीत होते है, पर सही मायने में देखा जाए तो दोनो को एक ही सिक्के के दो पहलू कहना उचित होगा। मनुष्य जन्मोपुरांत अपने परिवार के द्वारा अपने समाज से सर्वप्रथम जुड़ता है उसके बाद ही वो अपने हितचिंतकों द्वारा साहित्य की जानकारी प्राप्त करता है। जैसे साहित्य की उन्नति के लिए समाज की अभिवृद्धि अतिआवश्यक है, उसी तरह से समाज की अभिवृद्धि के लिए साहित्य का अवदान जरूरी है। समाज शब्द का प्रयोग व्यक्ति के समूह के लिए किया जाता है तो साहित्य शब्द का प्रयोग सभी के हित के भाव से सम्मिलित होता है।

साहित्य अगर जीवन की आलोचना है तो समाज उस जीवन का रक्षण करता है। समाज की अभिवृद्धि के लिए साहित्य का अवदान अतिआवश्यक है क्योंकि समाज भले ही मनुष्य को सुरक्षित रखता है, परंतु साहित्य मनुष्य का जीना सिखाता है। अंततः जीवन की सार्थकता को निर्वाहित करने के लिए समाज तथा साहित्य दोनो का साथ होना परम आवश्यक है।

साहित्य तथा समाज मनुष्य के,
जीवन का अभिन्न अंग है,
साहित्य समाज का दर्पण है,
तो समाज साहित्य का मूल आधार है,
एक दूसरे के बिना अपूर्ण,
इसी कारण एक दूसरे के पूरक है,
समाज जीव है तो,
साहित्य उस में बसा हुआ प्राण है।

समाज का अर्थ : समाजशास्त्र में व्यक्तियों के मध्य पाये जाने वाले सामाजिक सम्बन्धों को 'समाज' कहते हैं। समाजशास्त्रीयों का यह मानना हैं, कि मात्र व्यक्तियों के संग्रह या झुंड को समाज नहीं कहा जा सकता, बल्कि व्यक्तियों के माध्य पाए जाने वाले संबंधों व अंतः संबंधों से ही समाज का निर्माण होता है अतः इसे ही समाज कहते हैं।

दूसरे शब्दों में, समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में समाज के निर्माण हेतु सामाजिक संबंधों का होना आवश्यक है जैसा कि विभिन्न समाजशास्त्रियों द्वारा व्यक्त समाज की परिभाषाओं से स्पष्ट होता है।

मैकाइवर एवं पेज़ के अनुसार - "समाज कार्य प्रणालियों तथा कृतियों की अधिकार सत्ता और परस्पर संबंधों के अनेक समूहों और श्रेणियों की तथा मानव व्यवहार के नियंत्रण अथवा स्वतंत्रों की एक व्यवस्था है, जो निरंतर परिवर्तनशील है, यह सामाजिक संबंधों का जाल है।"

टालकॉट पारसंस के अनुसार- "समाज को उन मानवीय संबंधों की पूर्ण जटिलता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो साधन और साध्य के संबंध संदर्भ में की गई क्रिया के उपरांत आवश्यकता उत्पन्न हो चाहे वह यथार्थ हो या प्रतीकात्मक।"

साहित्य का अर्थ : किसी भाषा के वाचिक और लिखित (शास्त्रसमूह) को साहित्य कह सकते हैं। दुनिया में सबसे पुराना वाचिक साहित्य हमें आदिवासी भाषाओं में मिलता है। इस दृष्टि से आदिवासी साहित्य सभी साहित्य का मूल स्रोत है। साहित्य - स+हित+य के योग से बना है। साहित्य" लैटिन से आता है, और इसका मूल अर्थ " अक्षरों का उपयोग " या "लेखन" था। लेकिन जब यह शब्द लैटिन से निकली रोमांस भाषाओं में प्रवेश किया, तो इसने "पुस्तकों को पढ़ने या अध्ययन करने से प्राप्त ज्ञान" का अतिरिक्त अर्थ ग्रहण कर लिया। तो हम इस परिभाषा का उपयोग "साहित्य के साथ ... को समझने के लिए कर सकते हैं। साहित्य में विधाओं के मुख्य उदाहरण कविता, नाटक और गद्य हैं। कविता साहित्य में एक शैली है जो भाषा के सौंदर्य और लयबद्ध गुणों का उपयोग करती है, इसके अलावा, या इसके स्थान पर अर्थ निकालने के लिए अर्थपूर्ण प्रकट होता है। नाटक संवाद और प्रदर्शन के माध्यम से काल्पनिक प्रतिनिधित्व का एक तरीका है। गद्य भाषा का एक ऐसा रूप है जिसकी कोई औपचारिक मीट्रिक संरचना नहीं है। यह पारंपरिक कविता के मामले में लयबद्ध संरचना के बजाय भाषण के प्राकृतिक प्रवाह और सामान्य व्याकरणिक संरचना को लागू करता है। अंग्रेजी में साहित्य की शैलियाँ तब उपश्रेणियों में आती हैं, जो साहित्य की तीन विधाएँ बनाती हैं।

साहित्य के उदाहरण हैं:

कविता: गाथागीत, गीत, महाकाव्य, नाटकीय, कथा

नाटक: त्रासदी, हास्य, इतिहास, मेलोड्रामा, संगीत

गद्य: फिक्शन (उपन्यास, उपन्यास, लघु कथा), नॉनफिक्शन (आत्मकथा, जीवनी, निबंध) आदि।

साहित्य और समाज : साहित्य समाज का दर्पण होता है। किसी भी राष्ट्र या समाज के सांस्कृतिक स्तर का अनुमान उसके साहित्य के स्तर से लगाया जा सकता हैं. साहित्य न केवल समाज का दर्पण होता हैं. बल्कि वह दीपक भी होता हैं.

जो समाज का उसकी बुराइयों की ओर ध्यान दिलाता हैं. तथा एक आदर्श समाज का रूप प्रस्तुत करता हैं. विद्वानों ने किसी देश को बिना साहित्य के मृतक के समान माना हैं। यह माना जाता हैं कि किसी देश की सभ्यता तथा संस्कृति के इतिहास को पढ़ने के लिए उसके साहित्य को ही पढना पर्याप्त होता है | इसीलिए साहित्य किसी देश ,समाज तथा उसकी सभ्यता या संस्कृति का दर्पण होता हैं.

भारतीय साहित्य की महान परम्पराओं के कारण ही इस देश का गौरव विश्व के मानचित्र पर अक्षुण्ण बना रहा हैं।

जिसमे साहित्यकारों ने अपनी लेखनी से विश्व समाज का सदैव मार्गदर्शन किया हैं. कालिदास, पाणिनी याज्ञवल्क्य, तुलसी, कबीर सूर मीरा आदि ने प्राचीन तथा मध्यकालीन कवियों द्वारा फैलाए गये प्रकाश से भारतीय समाज सदैव आलोकित होता रहा हैं।

साहित्य ही वह क्षेत्र हैं जो मनुष्य को परमार्थ, समाज सेवा, करुणा, मानवीयता, सदाचरण तथा विश्व बन्धुत्व जैसे उद्दात मानवीय मूल्यों का अनुसरण करना सिखाता हैं. संस्कारवान व्यक्ति वही हैं जो हृदय से उदार हो,

निष्कपट व्यवहार करने वाला हो तथा अपने लिए किसी प्रकार के लोभ लालच की अपेक्षा ना करता हो. साहित्य सदैव ऐसे ही महान मानवीय मूल्यों की रचना करता है जो प्राणिमात्र के सुखद जीवन की कल्पना करते हों | तुलसी ने अपनी प्रसिद्ध रचना

रामचरितमानस में ऐसी अनेक सूक्ति परक चौपाइयों की रचना की है जो व्यक्ति तथा समाज को सीधे -सीधे निर्देश करती हैं ,जैसे - का वर्षा जब कृषि सुखाने कर्म प्रधान विश्व करि राखा आदि |

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, मुंशी प्रेमचन्द ,निराला ,मुक्तिबोध जैसे अनेक साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय समाज में सदाचार के संस्कार,श्रम साधना के संस्कार , राष्ट्रभक्ति के संस्कार, निस्वार्थ समाज सेवा के संस्कार, आचरण की सभ्यता के संस्कार तथा विश्व मानवता के संस्कार, सामाजिक समरसता के संस्कार आदि की स्थापना की हैं।

त्यागकर समर्पित होने की प्रेरणा दी हैं. गुप्त जी की भारत भारती तथा प्रेमचन्द की कहानी सोजे वतन का अंग्रेजी शासन के प्रतिबंध का भी सामना करना पड़ा .

साहित्य का दायित्व- साहित्य और समाज का अटूट संबंध यह संदेश देता है कि साहित्य को समाज का सही मार्गदर्शन करना चाहिए. उसके उत्थान में और उसकी आकांक्षा को स्वर देने में सहभागी बनना चाहिए.

समाज का साहित्य पर प्रभाव इस प्रकार स्पष्ट कहा जा सकता है कि साहित्य और समाज परस्पर आश्रित और एक दूसरे के पूरक है.

साहित्य पर समाज का प्रभाव :

कोई भी साहित्य अपने समाज से अछुता नही रह सकता है. साहित्य का प्रतिभा प्रासाद समाज के वातावरण पर ही खड़ा होता है. यह स्पष्ट देखा जाता है कि जैसा समाज होता है वैसा ही उस काल का साहित्य बन जाता है.

उदहारण के लिए हिंदी साहित्य का आदिकाल एक प्रकार से युद्ध युग था. समाज में शौर्य और बलिदान की भावना थी वीरयोद्धा प्राणोत्सर्ग करना सामान्य बात समझते थे. फलस्वरूप वीरगाथा काव्यों की रचना हुई. परवर्ती काल में मुगलों के आक्रमण से हिन्दू जनता पीड़ित थी इस कारण सूर और तुलसी आदि भक्त कवियों ने भक्ति का मार्ग प्रशस्त किया तथा सामाजिक समन्वय की भरपूर चेष्टा की. वर्तमान काल में साहित्य में सामाजिक द्रष्टिकोण का परिचायक है. इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि समय की परिवर्तनशीलता के कारण समाज का साहित्य पर भी प्रभाव पड़ा है।

समाज की अभिवृद्धि में साहित्य का अवदान :

समाज की अभिवृद्धि में साहित्य के अवदान परीक्षण से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि साहित्य का स्वरूप क्या है और उसके समाज दर्शन का लक्ष्य क्या है? हितेन सह इति सष्टिमूह तस्याभाव: साहित्यम्। यह वाक्य संस्कृत का एक प्रसिद्ध सूत्र-वाक्य है जिसका अर्थ होता है साहित्य का मूल तत्त्व सबका हितसाधन है। मानव अपने मन में उठने वाले भावों को जब लेखनीबद्ध कर भाषा के माध्यम से प्रकट करने लगता है तो वह रचनात्मकता ज्ञानवर्धक अभिव्यक्ति के रूप में साहित्य कहलाता है। साहित्य का समाजदर्शन शूल-कंटों जैसी परंपराओं और व्यवस्था के शोषण रूप का समर्थन करने वाले धार्मिक नैतिक मूल्यों के बहिष्कार से भरा पड़ा है। जीवन और साहित्य की प्रेरणाएँ समान होती हैं। समाज और साहित्य में अन्योन्याश्रित संबंध होता है। साहित्य की पारदर्शिता समाज के नवनिर्माण में सहायक होती है जो खामियों को उजागर करने के साथ उनका समाधान भी प्रस्तुत करती है। समाज के यथार्थवादी चित्रण, समाज सुधार का चित्रण और समाज के प्रसंगों की जीवंत अभिव्यक्ति द्वारा साहित्य समाज के नवनिर्माण का कार्य करता है।

साहित्य समाज की उन्नति और विकास की आधारशिला रखता है। इस संदर्भ में अमीर खुसरो से लेकर तुलसी, कबीर, जायसी, रहीम, प्रेमचंद, भारतेन्दु, निराला, नागार्जुन तक की श्रृंखला के रचनाकारों ने समाज के नवनिर्माण में अभूतपूर्व योगदान दिया है। व्यक्तिगत हानि उठाकर भी उन्होंने शासकीय मान्यताओं के खिलाफ जाकर समाज के निर्माण हेतु कदम उठाए। कभी-कभी लेखक समाज के शोषित वर्ग के इतना करीब होता है कि उसके कष्टों को वह स्वयं भी अनुभव करने लगता है। तुलसी, कबीर, रैदास आदि ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों का समाजीकरण किया था जिसने आगे चलकर अविकसित वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में समाज में स्थान पाया। मुंशी प्रेमचंद के एक कथन को यहाँ उद्धृत करना उचित होगा, ‘‘जो दलित है, पीड़ित है, संत्रस्त है, उसकी साहित्य के माध्यम से हिमायत करना साहित्यकार का नैतिक दायित्व है।’’

प्रेमचंद का किसान-मज़दूर चित्रण उस पीड़ा व संवेदना का प्रतिनिधित्व करता है जिनसे होकर आज भी अविकसित एवं शोषित वर्ग गुज़र रहा है। साहित्य में समाज की विविधता, जीवन-दृष्टि और लोककलाओं का संरक्षण होता है। साहित्य समाज को स्वस्थ कलात्मक ज्ञानवर्धक मनोरंजन प्रदान करता है जिससे सामाजिक संस्कारों का परिष्कार होता है। रचनाएँ समाज की धार्मिक

भावना, भक्ति, समाजसेवा के माध्यम से मूल्यों के संदर्भ में मनुष्य हित की सर्वोच्चता का अनुसंधान करती हैं। यही दृष्टिकोण साहित्य को मनुष्य जीवन के लिये उपयोगी सिद्ध करते हैं।

साहित्य की सार्थकता इसी में है कि वह कितनी सूक्ष्मता और मानवीय संवेदना के साथ सामाजिक अवयवों को उद्घाटित करता है। साहित्य संस्कृति का संरक्षक और भविष्य का पथ-प्रदर्शक है। संस्कृति द्वारा संकलित होकर ही साहित्य 'लोकमंगल' की भावना से समन्वित होता है।

उन्नीसवीं एवं बीसवीं शताब्दी को भारतीय साहित्य के सांस्कृतिक एवं समाज निर्माण की शताब्दी कहा जा सकता है। इस शताब्दी ने स्वतंत्रता के साथ-साथ समाज सुधार को भी संघर्ष का विषय बनाया। इस काल के साहित्य ने समाज जागरण के लिये कभी अपनी पुरातन संस्कृति को निष्ठा के साथ स्मरण किया है, तो कभी तात्कालिक स्थितियों पर गहराई के साथ चिंता भी अभिव्यक्त की।

आठवें दशक के बाद से आज तक के काल का साहित्य जिसे वर्तमान साहित्य कहना अधिक उचित होगा, फिर से अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़कर समाज निर्माण की भूमिका को वरीयता के साथ पूरा करने में जुटा है। वर्तमान साहित्य मानव को श्रेष्ठ बनाने का संकल्प लेकर चला है। व्यापक मानवीय एवं राष्ट्रीय हित इसमें निहित हैं। हाल के दिनों में संचार साधनों के प्रसार और सोशल मीडिया के माध्यम से साहित्यिक अभिवृत्तियाँ समाज के नवनिर्माण में अपना योगदान अधिक सशक्तता से दे रही हैं। हालाँकि बाजारवादी प्रवृत्तियों के कारण साहित्यिक मूल्यों में गिरावट आई है परंतु अभी भी स्थिति नियंत्रण में है।

आज आवश्यकता है कि सभी वर्ग यह समझें कि साहित्य समाज के मूल्यों का निर्धारक है और उसके मूल तत्त्वों को संरक्षित करना जरूरी है क्योंकि साहित्य जीवन के सत्य को प्रकट करने वाले विचारों और भावों की सुंदर अभिव्यक्ति है।

निष्कर्ष: यह कहा जा सकता है कि साहित्य और जीवन के बीच यथार्थ एक पगडंडी है जो तब अधिक स्पष्टता से लक्ष्य की ओर जा सकता है, जब उसका प्रामाणिक सामाजिक सत्य हो। सामाजिक यथार्थ ही साहित्य को उसके ऐतिहासिक चरित्र से परिचित कराता है। दूसरी ओर, साहित्य समाज के प्रस्ताव एवं विश्वसनीय हो सके, इस संदर्भ में भी सामाजिक यथार्थ की महत्ता अक्षुण्ण बनी हुई है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि मनुष्य का सामाजिक और वैयक्तिक जीवन का भाष्य है साहित्य और साहित्य एसआईटी जीवन है यथार्थ, यथार्थ सामाजिक। समाज मानव के व्यक्तित्व का आकार देता है। साहित्य को आकार देने में समाज का योगदान सर्वविदित है। समाज ही वह आधार है जिस पर साहित्य रूपी अभिषेक का निर्माण हुआ है। लेकिन अपने असोसिएशन के आर्टिकुलर साहित्य स्वयं को भी एक आधार में बदल दिया गया है क्योंकि यह भी समाज को प्रभावित कर आकार प्रदान करता है। इस प्रकार व्यक्ति के निर्माण में एक ओर समाज की भूमिका का लक्ष्य होता है तो दूसरी ओर साहित्य की भी। यथार्थ साहित्य के सुस्वास्थ्य का वर्णन किया गया है। इसकी कमी में साहित्य वैविध्य होता है। यथार्थ के विभिन्न दार्शनिकों में यथार्थ सामाजिक साहित्य अति प्रिय है क्योंकि यह व्यक्ति और उसके दोनों समाज ही अपनी चिंता का केंद्र हैं। व्यक्ति, समाज, यथार्थ यथार्थता और साहित्य का समाहार किसी भी रचनाकार की रचना - प्रक्रिया को निर्धारित करने वाली चीजें हैं। एकांत संगति से ही साहित्य का सुंदर भवन निर्मित होता है। सामाजिक यथार्थ साहित्य विकास सर्वदा परिप्रेक्ष्य है।

संदर्भ सूची:

1. काशीनाथ सिंह के कथा- साहित्य में सामाजिक यथार्थ का स्वरूप और विश्लेषण।
2. मुंशी प्रेमचंद का निबंध : साहित्य का उद्देश्य।
3. समाज के नवनिर्माण में साहित्य की भूमिका दृष्टि विज़न।
4. https://hihindi.com/sahitya-aur-samaj-par-nibandh/
5. https://www.storyboardthat.com/hi/articles/e/%A5%A4
6. https://www.nayadost.in/2021/06/meaning-of-society-in-hindi.html